यह कविता सोलह वर्षीया नेहा ने भोपाल से भेजी है । कविता में सरदार सरोवर बांध से होने वाले विस्थापन की व्यथा तो है ही, इसमें वर्चस्व की नीतियों को आदिवासी नजरिये से देखने का प्रयास है । इसीलिए हमने भाषा के आंचलिक लहजे को यथावत रहने दिया है ।

नर्मदा संघर्ष

एक आम आदिवासी की कथा

❑ नेहा साहित्याश्रीवास्तव

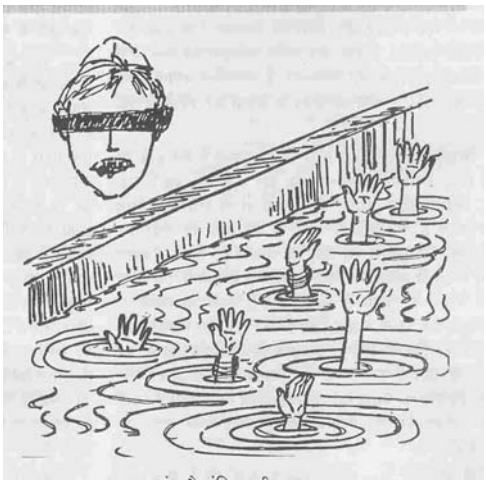

वर्षों से यही देखा है
खेत खलियान, हमारा गांव ।
काहे यह कह डराओ हमका
के यह सब उजड़ जावेगा।
इसे छोड़ कहां जावें ?

इहां तो हमारे प्राण बसे,
हम तो जीना चाहें इहाँ ही,
हम तो मरना चाहें इहाँ ही ।
कर्ज लिए ते हमके न पूछे,
प्रकृति से खिलवाड़ किए, हमका न पूछे;
अब किस हक से हमका विस्थापित करें हैं ?
कैसे जीबो रे !

कौन का सरदार ? काहे का सरोवर ?
कौन का जंगल ? कौन की यह नदिया ?
क्या हमरी नहीं ? हमारा हक नाहीं इन पर ?
क्या इह सब सरकारी है ? हम भीलों का नहीं ?

बरगी से का भई ?
हमका तो बताओ ?
मंदिर मस्जिद नहीं मिटाओ,
पर जंगल पर्वत मिटाओ ?

बांध है मंदिर नवीन भारत का,
तो मंदिर से तबाही क्यों ?
भारत बसता है गांवों में,
यह सुनाया क्यों हर भाषण में ?

जो नदी से प्रेम करे हैं,
वो ही जाने हैं,
नदी से दूर जाने की,
पीड़ा व्यथा को ।

हमारी दुर्गती, हमारी लाचारी,
हमारा क्रोध, हमारा आंदोलन,
यही है हमारा संघर्ष,
यही है हमारी ताकत । ◆